घनानंद ग्रन्थावली

घनानंद (१६७३- १७६०) रीतिकाल की तीन प्रमुख काव्यधाराओं- रीतिबद्ध, रीतिसिद्ध और रीतिमुक्त के अंतिम काव्यधारा के अग्रणी कवि हैं। ये 'आनंदघन' नाम स भी प्रसिद्ध हैं। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने रीतिमुक्त घनानन्द का समय सं. १७४६ तक माना है। इस प्रकार आलोच्य घनानन्द वृंदावन के आनन्दघन हैं। शुक्ल जी के विचार में ये नादिरशाह के आक्रमण के समय मारे गए। श्री हजारीप्रसाद द्विवेदी का मत भी इनसे मिलता है। लगता है, कवि का मूल नाम आनन्दघन ही रहा होगा, परंतु छंदात्मक लय-विधान इत्यादि के कारण ये स्वयं ही आनन्दघन से घनानन्द हो गए। अधिकांश विद्वान घनानन्द का जन्म दिल्ली और उसके आस-पास का होना मानते हैं।

जीवन परिचय

अनुमान से इनका जन्मकाल संवत १७३० के आसपास है। इनके जन्मस्थान और जनक के नाम अज्ञात हैं। आरंभिक जीवन दिल्ली तथा उत्तर जीवन वृंदावन में बीता। जाति के कायस्थ थे। साहित्य और संगीत दोनों में इनकी असाधारण गति थी।

कहा जाता है कि ये शाहंशाह मुहम्मदशाह रँगीले के दरबार में मीरमुंशी थे और 'सुजान' नामक नर्तकी पर आसक्त थे। एक दिन दरबारियों ने बादशाह से कह दिया कि मुंशी जी गाते बहुत अच्छा हैं। उसने इनका गाना सनने की हठ पकड़ ली। पर ये गाना सुनाने में अपनी अशक्ति का ही निवेदन करते रहे। अंत में बादशाह से कहा गया था कि यदि सुजान बुलाई जाय तो ये गाना सुनाएँगे। वह बुलाई गई और इन्होंने उसकी ओर उन्मुख होकर सचमुच गाया और ऐसा गाया कि सारा दरबार मंत्रमुग्ध हो गया। बादशाह ने आज्ञा की अवहेलना के अपराध में इन्हें दिल्ली से निष्कासित कर दिया। सुजान ने इनका साथ नहीं दिया। वहाँ से वे वृंदावन चले गए और निंबार्क संप्रदायाचार्य श्रीवृंदावनदेव से दीक्षा ग्रहण की। इनका सखीभावसूचक नाम 'बहुगुनी' था।

भगवान् कृष्ण के प्रति अनुरक्त होकर वृंदावन में उन्होंने निम्बार्क संप्रदाय में दीक्षा ली और अपने परिवार का मोह भी इन्होंने उस भक्ति के कारण त्याग दिया। मरते दम तक वे राधा-कृष्ण सम्बंधी गीत, कवित्त-सवैये लिखते रहे। कवि घनानंद दिल्ली के बादशाह मुहम्मद शाह के मीर मुंशी थे। कहते हैं कि सुजान नाम की एक स्त्री से उनका अटूट प्रेम था। उसी के प्रेम के कारण घनानंद बादशाह के दरबार में बे-अदबी कर बैठे, जिससे नाराज होकर बादशाह ने उन्हें दरबार से निकाल दिया। साथ ही घनानंद को सुजान की बेवफाई ने भी निराश और दुखी किया। वे वृंदावन चले गए और निंबार्क संप्रदाय में दीक्षित होकर भक्त के रूप में जीवन-निर्वाह करने लगे। परंतु वे सुजान को भूल नहीं पाए और अपनी रचनाओं में सुजान के नाम का प्रतीकात्मक प्रयोग करते हुए काव्य-रचना करते रहे। घनानंद मूलतः प्रेम की पीड़ा के कवि हैं। वियोग वर्णन में उनका मन अधिक रमा है।

ये प्रेमसाधना का अत्यधिक पथ पार कर बड़े बड़े साधकों की कोटि में पहुँच गए थे। यमुना के कछारों और ब्रज की वीथियों में भ्रमण करते समय ये कभी आनंदातिरेक में हँसने लगते और कभी भावावेश में अश्रु की धारा इनके नेत्रों से प्रवाहित होने लगती। नागरीदास जैसे श्रेष्ठ महात्मा इनका बड़ा संमान करते थे।

मथुरा पर अहमदशाह अब्दाली के प्रथम आक्रमण के समय, सं. १८१३ में, ये मार डाले गए। विश्वनाथप्रसाद मिश्र के मतानुसार उनकी मृत्यु अहमदशाह अब्दाली के मथुरा पर किए गए द्वितीय आक्रमण में हुई थी।[1]

रचनाएँ

घनानंद द्वारा रचित ग्रंथों की संख्या ४१ बताई जाती है-

> *सुजानहित, कृपाकंदनिबंध, वियोगबेलि, इश्कलता, यमुनायश, प्रीतिपावस, प्रेमपत्रिका, प्रेमसरोवर, व्रजविलास, रसवसंत, अनुभवचंद्रिका, रंगबधाई, प्रेमपद्धति, वृषभानुपुर सुषमा, गोकुलगीत, नाममाधुरी,*

गिरिपूजन, विचारसार, दानघटा, भावनाप्रकाश, कृष्णकौमुदी, घामचमत्कार, प्रियाप्रसाद, वृंदावनमुद्रा, व्रजस्वरूप, गोकुलचरित्र, प्रेमपहेली, रसनायश, गोकुलविनोद, मुरलिकामोद, मनोरथमंजरी, व्रजव्यवहार, गिरिगाथा, व्रजवर्णन, छंदाष्टक, त्रिभंगी छंद, कबित्तसंग्रह, स्फुट पदावली और परमहंसवंशावली।

इनका 'व्रजवर्णन' यदि 'व्रजस्वरूप' ही है तो इनकी सभी ज्ञात कृतियाँ उपलब्ध हो गई हैं। छंदाष्टक, त्रिभंगी छंद, कबित्तसंग्रह-स्फुट वस्तुत: कोई स्वतंत्र कृतियाँ नहीं हैं, फुटकल रचनाओं के छोटे छोटे संग्रह है। इनके समसामयिक व्रजनाथ ने इनके ५०० कवित्त सवैयों का संग्रह किया था। इनके कबित्त का यह सबसे प्राचीन संग्रह है। इसके आरंभ में दो तथा अंत में छह कुल आठ छंद व्रजनाथ ने इनकी प्रशस्ति में स्वयं लिखे। पूरी 'दानघटा' 'घनआनंद कबित्त' में संख्या ४०२ से ४१४ तक संगृहीत है। परमहंसवंशावली में इन्होंने गुरुपरंपरा का उल्लेख किया है। इनकी लिखी एक फारसी मसनवी भी बतलाई जाती है पर वह अभी तक उपलब्ध नहीं है।

घनानंद ग्रंथावली में उनकी १६ रचनाएँ संकलित हैं। घनानंद के नाम से लगभग चार हजार की संख्या में कवित्त और सवैये मिलतें हैं। इनकी सर्वाधिक लोकप्रिय रचना 'सुजान हित' है, जिसमें ५०७ पद हैं। इन में सुजान के प्रेम, रूप, विरह आदि का वर्णन हुआ है। सुजान सागर, विरह लीला, कृपाकंड निबंध, रसकेलि वल्ली आदि प्रमुख हैं। उनकी अनेक रचनाओं का अंग्रेज़ी अनुवाद भी हो चुका है।

काव्यगत विशेषताएँ

हिंदी के मध्यकालीन स्वच्छंद प्रवाह के प्रमुख कर्ताओं में सबसे अधिक साहित्यश्रुत घनआनंद ही प्रतीत होते है। इनकी रचना के दो प्रकार हैं : एक में प्रेमसंवेदना क अभिव्यक्ति है, और दूसरे में भक्तिसंवेदना की व्यक्ति। इनकी रचना अभिधा के वाच्य रूप में कम, लक्षणा के लक्ष्य और व्यंजना के व्यंग्य रूप में अधिक है। ये भाषाप्रवीण भी थे और व्रजभाषाप्रवीण भी। इन्होंने व्रजभाषा के प्रयोगों के आधार पर नूतन वाग्योग संघटित किया है।

उनकी रचनाओं में प्रेम का अत्यंत गंभीर, निर्मल, आवेगमय और व्याकुल कर देने वाला उदात्त रूप व्यक्त हुआ है, इसीलिए घनानंद को 'साक्षात रसमूर्ति' कहा गया है। घनानंद के काव्य में भाव की जैसी गहराई है, वैसी ही कला की बारीकी भी। उनकी कविता में लाक्षणिकता, वक्रोक्ति, वाग्विदग्धता के साथ अलंकारों का कुशल प्रयोग भी मिलता है। उनकी काव्य-कला में सहजता के साथ वचन-वक्रता का अद्‌भुत मेल है। घनानंद की भाषा परिष्कृत और साहित्यिक ब्रजभाषा है। उसमें कोमलता और मधुरता का चरम विकास दिखाई देता है। भाषा की व्यंजकता बढ़ाने में वे अत्यंत कुशल थे। वस्तुतः वे ब्रजभाषा प्रवीण ही नहीं सर्जनात्मक काव्यभाषा के प्रणेता भी थे।

कलापक्ष

घनानंद भाषा के धनी थे। उन्होंने अपने काव्य में ब्रजभाषा का प्रयोग किया है। रीतिकाल की यही प्रमुख भाषा थी। इनकी ब्रजभाषा अरबी, फारसी, राजस्थानी, खड़ी बोली आदि के शब्दों से समृद्ध है। उन्होंने सरल-सहज लाक्षणिक व्यंजनापूर्ण भाषा का प्रयोग किया है। घनानंद ने लोकोक्तियों और मुहावरों के प्रयोग से भाषा सौंदर्य को चार चाँद लगा दिए हैं। घनानंद ने अपने काव्य में अलंकारो का प्रयोग अत्यंत सहज ढंग से किया है। उन्होंने काव्य में अनुप्रास, यमक, उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा एवं विरोधाभास आदि अलंकारो का प्रयोग बहुलता के साथ हुआ है। 'विरोधाभास ' घनानंद का प्रिय अलंकर है। आचार्य विश्वनाथ ने उनके बारे में लिखा है-

विरोधाभास के अधिक प्रयोग से उनकी कविता भरी पड़ी है। जहाँ इस प्रकार की कृति दिखाई दे, उसे निःसंकोच इनकी कृति घोषित किया जा सकता है।

छंद-विधान

छंद-विधान की दृष्टि से घनानंद ने कवित्त और सवैये ही अधिक लिखे हैं। वैसे उन्होंने दोहे और चौपाइयां भी लिखी हैं। रस की दृष्टि से घनानंद का काव्य मुख्यतः श्रृंगार रस प्रधान है। इनमें वियोग श्रृंगार की प्रधानता है। कहीं-कहीं शांत रस का प्रयोग भी देखते बनता है। घनानंद को भाषा में चित्रात्मकता और वाग्विदग्धता का गुण भी आ गया है।

कवित्त व सवैया

इन पदों में सुजान के प्रेम रूप विरह आदि का वर्णन हुआ है

नहिं आवनि-औधि, न रावरी आस,
इते पैर एक सी बाट चहों।

घनानंद नायिका सुजान का वर्णन अत्यंत रूचिपूर्वक करतें हैं। वे उस पर अपना सर्वस्व न्योछावर कर देतें हैं

रावरे रूप की रीति अनूप नयो नयो लागत ज्यों ज्यों निहारिये।
त्यों इन आँखिन बानि अनोखी अघानि कहू नहिं आनि तिहारिये ॥

घनानंद प्रेम के मार्ग को अत्यंत सरल बताते हैं, इन में कहीं भी वक्रता नहीं है।

अति सूधो सनेह को मारग है, जहाँ नेकु सयानप बांक नहीं।

कवि अपनी प्रिया को अत्यधिक चतुराई दिखाने के लिए उलाहना भी देता है।

तुम कौन धौं पाटी पढ़े हौ कहौ मन लेहूं पै देहूं छटांक नहीं।

कवि अपनी प्रिया को प्रेम पत्र भी भिजवाता है पर उस निष्ठुर ने उसे पढ़कर देखा तक नहीं।

जान अजान लौं टूक कियौ पर बाँचि न देख्यो।

रूप सौंदर्य का वर्णन करने में कवि घनानंद का कोई सानी नहीं है। वह काली साड़ी में अपनी नायिका को देखकर उन्मत्त सा हो जातें हैं। सावँरी साड़ी ने सुजान के गोरे सरीर को कितना कांतिमान बना दिया हैं।

स्याम घटा लिपटी थिर बीज की सौहैं अमावस-अंक उजयारी।
धूम के पुंज में ज्वाल की माल पै द्विग-शीतलता-सुख-कारी ॥
कै छबि छायौ सिंगार निहारी सुजान-तिया-तन-दीपति-त्यारी।
कैसी फबी घनानन्द चोपनि सों पहिरी चुनी सावँरी सारी ॥

घनानंद के काव्य की एक प्रमुख विशेषता है- भाव प्रवणता के अनुरूप अभिव्यक्ति की स्वाभाविक वक्रता। घनानंद का प्रेम लौकिक प्रेम की भाव भूमि से उपर उठकर आलौकिक प्रेम की बुलंदियों को छुता हुआ नजर आता है, तब कवि की प्रियासुजान ही परब्रह्म का रूप बन जाती है। ऐसी दशा में घनानंद प्रेम से उपर उठ कर भक्त बन जाते हैं।

नेही सिरमौर एक तुम ही लौं मेरी दौर

नहि और ठौर, काहि सांकरे समहारिये

कवित्त

बहुत दिनान को अवधि आसपास परे,
खरे अरबरनि भरे हैं उठी जान को।
कहि कहि आवन छबीले मनभावन को,
गहि गहि राखति ही दै दै सनमान को ॥
झूटी बतियानि की पतियानि तें उदास हैव कै,
अब न घिरत घन आनंद निदान को।
अधर लगे हैं आनि करि कै पयान प्रान,
चाहत चलन ये संदेसों लै सु

देव ग्रन्थावली

Hindi के ब्रजभाषा काव्य के अंतर्गत **देव** को महाकवि का गौरव प्राप्त है। उनका पूरा नाम देवदत्त था। उनका आविर्भाव हिन्दी के रीतिकाल में हुआ था। यद्यपि ये प्रतिभा में बिहारी, ...भूषण, मतिराम आदि समकालीन कवियों से कम नहीं वरन् कुछ बढ़कर ही सिद्ध होते हैं, फिर भी इनका किसी एक विशिष्ट राजदरबार से संबंध न होने के कारण इनकी वैसी ख्याति और प्रसिद्धि नहीं हुई। हजारी प्रसाद द्विवेदी के अनुसार, *"मतिराम और जसवंत सिंह के बाद यदि कोई सचमुच ही शक्तिशाली कवि और अलंकारिक कवि हुआ तो वह देव कवि थे"।* **छल नामक संचारी भाव इन की ही देन है।** देव को अत्यधिक प्रसिद्ध करनेवाले लेखकों में मिश्रबंधु हैं जिनके विचार से देव का स्थान हिंदी साहित्य में तुलसी के बाद आता है। देव और बिहारी में कौन अधिक श्रेष्ठ है इसको लेकर एक विवाद भी चला था। इसी संबंध में 'देव और बिहारी' नामक पुस्तक पंडित कृष्णबिहारी मिश्र ने लिखी और 'बिहारी और देव' की रचना लाला भगवानदीन ने की। इन दोनों में देव और बिहारी की काव्यप्रतिभा को स्पष्ट करने का प्रयत्न है।

यद्यपि हिंदी साहित्य के अंतर्गत 'देव' नाम के छह-सात कवि मिलते हैं, तथापि प्रसिद्ध कवि देव को छोड़कर अन्य 'देव' नामधारी कवियों की कोई विशेष ख्याति नहीं हुई। देव का जन्म मैनपुरी के कुसमरा कस्बे में 1673 में हुआ था , (उस समय कुसमरा इटावा जिला के अंतर्गत आता था)।

जीवन परिचय

[संपादित करें]

प्रसिद्ध देव कवि का जन्म सं. 1673 में हुआ था। ये द्यौसरिया (देवसरिया) कान्यकुब्ज द्विवेदी ब्राह्मण थे। इनका निवासस्थान इटावा था, जैसा 'भावविलास' की निम्नलिखित पंक्ति से स्पष्ट होता है-

द्यौसरिया कवि देव का नगर इटावो बास।

'भावविलास' के ही सक्ष्य पर इनके जन्म संवत् की भी पुष्टि होती है जिसकी रचना इन्होंने संवत् १७४६ में की। वह दोहा इस प्रकार है-

सुभ सत्रह से छियालिस, चढ़त सोरहीं वर्ष।
कढ़ी देव मुख देवता भावविलास सहर्ष॥

देव ने कई आश्रयदाताओं के यहाँ रहकर अपनी रचनाएँ कीं। इनकी रचना 'अष्टयाम' औरंगजेब के पुत्र आजमशाह के संकेत पर हुई थी और उसने उन्हें पुरस्कृत भी किया था। संभवत: 'भावविलास' भी आजमशाह के आश्रय में लिखा गया हो। देव के दूसरे आश्रयदाता दादरीपति राजा सीताराम के भतीजे

भवानीदत्त वैश्य थे। ये चरखी दादरी (रेवाड़ी) के निवासी थे। इनके लिए इन्होंने 'भवानीविलास' नामक ग्रंथ लिखा। देव के तीसरे आश्रयदाता कुशलसिंह थे। ये फफूँद के रहनेवाले थे और देव ने इनके लिए 'कुशलविलास' नामक ग्रंथ की रचना की। देव के वास्तविक गुण-ग्राहक और आश्रयदाता राजा भोगीलाल हुए जिनके लिए इन्होंने 'रसविलास' नामक ग्रंथ की रचना की। इनके संबंध में देव ने अपने रसविलास में लिखा है-

भोगीलाल भूप लख पाखर लिवैया जिन
लाखन खरचि रुचि आषर खरीदे हैं।

देव की कृति 'प्रेमचंद्रिका' डयोंड़िया खेड़े के राव मर्दनसिंह के पुत्र उद्योतसिंह को समर्पित है। 'सुजानविनोद' की रचना दिल्ली के रईस पातीराम के पुत्र सुजानमणि के लिए हुई। इनकी अंतिम रचना 'सुखसागर तरंग' पिहानी के राजा अली अकबर खाँ के आश्रय में लिखी गई।

कृतियाँ

[संपादित करें]

देव की बहुसंख्यक रचनाओं का उल्लेख किया जाता है। कुछ लोग इनके ग्रंथों की संख्या ७२ और कुछ लोग ५२ कहते हैं। परंतु इनके प्रामाणिक ग्रंथ, जो प्राप्त होते हैं, १८ हैं। अन्य नौ ग्रंथ भी इनके नाम से उल्लिखित हैं और इस प्रकार कुल २७ ग्रंथ इनके नाम से मिलते हैं। निर्विवाद रूप से जिन १८ ग्रंथों को देवकृत स्वीकार किया जा सकता है वे इस प्रकार हैं-

(१) भावविलास (२) अष्टयाम (३) भवानीविलास (४) रसविलास (५) प्रेमचंद्रिका (६) राग रत्नाकर (७) सुजानविनोद (८) जगद्दर्शन पचीसी (९) आत्मदर्शन पचीसी
(१०) तत्वदर्शन पचीसी (११) प्रेम पचीसी (इन चारों पचीसियों का नाम देवशतक भी है।) (१२) शब्दरसायन (१३) सुखसागर तरंग (इतने ग्रंथ प्रकाशित हैं)

हस्तलिखित ग्रंथ हैं -

(१४) प्रेमतरंग (१५) कुसलविलास (१६) जातिविलास (१७) देवचरित्र (१८) देवमायाप्रपंच।

देवकृत एक संस्कृत ग्रंथ भी 'शृंगांर विलासिनी' नाम से भरतपुर से प्रकाशित हुआ था। इसका विषय भी श्रृगांर और नायिकाभेद है और हिंदी छंदों की रचना इस ग्रंथ में संस्कृत भाषा में की गई है। यद्यपि इसकी रचना शुद्ध संस्कृत में है, फिर भी देव की वास्तविक प्रतिभा के दर्शन इसमें नहीं होते।

देव के इन बहुसंख्यक ग्रंथों से यह निष्कर्ष निकालना कि सभी ग्रंथ एक दूसरे से भिन्न हैं, भ्रमात्मक है। इनके एक ग्रंथ के अनेक छंद दूसरे ग्रंथों में मिलते हैं और प्राय: इन्होंने अपने किसी पूर्ववर्ती ग्रंथ को आश्रयदाता का नाम बदलकर दूसरा नाम दे दिया है। देव का अधिकांश वर्ण्य विषय प्रेम और शृंगार है, परंतु प्रेम और शृंगार के सबंध में उनकी धारणा अत्यंत उच्च है और उनकी भावना उदात्त और उज्वल रूप में प्रकट हुई है। देव का काव्यशास्त्रीय विवेचन भी, जो इनके ग्रंथों में लक्षण अंशों में प्राप्त होता है, अपनी मौलिक विशेषता रखता है। परंतु देव की अधिक प्रसिद्धि उनके लक्षणों में न होकर उदाहरणों में समाहित है।

देव के सवैया और घनाक्षरी दोनों ही अपनी छाप रखते हैं और देव की सुंदर रचनाओं को किसी दूसरे कवि की रचनाओं से मिलाकर छिपा रखना संभव न होगा। देव की रचनाओं में जितना व्यापक अनुभव मिलता है उतनी ही गहरी भावुकता भी प्राप्त होती है। किसी भी भाव का देव जैसा सजीव और मर्मस्पर्शी वर्णन असाधारण वस्तु है। देव की कल्पना केवल ऊहात्मक विशेषता ही नहीं रखती, वरन् वह अनुभूति के रस से सिंचित होकर सरसता संपन्न होती है। इसी प्रकार देव की शब्दावली भी अपनी है। देव की शब्दावली
में संगीतमय प्रवाहयुक्त शब्दचयन, छंद को सहज स्मरणीय बना देता है और रूप, सौंदर्य, वस्तु, चरित्र के चित्रण में देव को अप्रतिम सफलता प्राप्त हुई है। देव अपनी इन्हीं विशेषताओं के कारण हिंदी साहित्य में अत्यंत उत्कृष्ट स्थान के अधिकारी हुए हैं, यद्यपि समसामयिक राज्य सम्मान इन्हें वैसा प्राप्त नहीं हुआ था जैसा इन्हें मिलना चाहिये